जिनेन्द्र वन्दना

एवं

बारह भावना

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

जिनेन्द्र वन्दना

चौबीसों परिग्रह रहित, चौबीसों जिनराज।
वीतराग सर्वज्ञ जिन हितकर सर्व समाज॥

१. श्री आदिनाथ वन्दना

श्री आदिनाथ अनादि मिथ्या मोह का मर्दन किया।
आनन्दमय ध्रुवधाम निज भगवान का दर्शन किया॥
निज आतमा को जानकर निज आतमा अपना लिया।
निज आतमा में लीन हो निज आतमा को पा लिया॥

२. श्री अजितनाथ वन्दना

जिन अजित जीता क्रोध रिपु निज आतमा को जानकर।
निज आतमा पहिचान कर निज आतमा का ध्यान धर॥
उत्तम क्षमा की प्राप्ति की बस एक ही है साधना।
आनन्दमय ध्रुवधाम निज भगवान की आराधना॥

३. श्री सम्भवनाथ वन्दना

सम्भव असम्भव मान मार्दव धर्ममय शुद्धातमा।
तुमने बताया जगत को सब आतमा परमातमा॥
छोटे-बड़े की भावना ही मान का आधार है।
निज आतमा की साधना ही साधना का सार है॥

४. श्री अभिनन्दननाथ वन्दना

निज आतमा को आतमा ही जानना है सरलता।
निज आतमा की साधना आराधना है सरलता॥
वैराग्य जननी नन्दनी अभिनन्दनी है सरलता।
है साधकों की संगिनी आनन्द जननी सरलता॥

५. श्री सुमतिनाथ वन्दना

हे सर्वदर्शी सुमति जिन! आनन्द के रस कंद हो।
हो शक्तियों के संग्रहालय ज्ञान के घनपिण्ड हो॥
निर्लोभ हो निर्दोष हो निष्क्रोध हो निष्काम हो।
हो परम-पावन पतित-पावन शौचमय सुखधाम हो॥

६. श्री पद्मप्रभ वन्दना

मानता आनन्द सब जग हास में परिहास में।
पर आपने निर्मद किया परिहास को परिहास में॥
परिहास भी है परीग्रह जग को बताया आपने।
हे पद्मप्रभ परमात्मा पावन किया जग आपने॥

७. श्री सुपार्श्वनाथ वन्दना

पारस सुपारस है वही पारस करे जो लोह को।
वह आतमा ही है सुपारस जो स्वयं निर्मोह हो॥
रति-राग वर्जित आतमा ही लोक में आराध्य है।
निज आतमा का ध्यान ही बस साधना है साध्य है॥

८. श्री चन्द्रप्रभ वन्दना

रति-अरतिहर श्री चन्द्र जिन तुम ही अपूरव चन्द्र हो।
निश्शेष हो निर्दोष हो निर्विघ्न हो निष्कंप हो॥
निकलंक हो अकलंक हो निष्ताप हो निष्पाप हो।
यदि हैं अमावस अज्ञजन तो पूर्णमासी आप हो॥

९. श्री सुविधिनाथ (पुष्पदंत) वन्दना

विरहित विविध विधि सुविधि जिन निज आतमा में लीन हो।
हो सर्वगुण सम्पन्न जिन सर्वज्ञ हो स्वाधीन हो॥
शिवमग बतावनहार हो शत इन्द्र करि अभिवन्द्य हो।
दुख-शोकहर भ्रमरोगहर संतोषकर सानन्द हो॥

१०. शीतलनाथ वन्दना

आपका गुणगान जो जन करें नित अनुराग से।
सब भय भयंकर स्वयं भयकरि भाग जावें भाग से॥
तुम हो स्वयंभू नाथ निर्भय जगत को निर्भय किया।
हो स्वयं शीतल मलयगिरि से जगत को शीतल किया॥

११. श्री श्रेयांसनाथ वन्दना

नरतन विदारन मरन-मारन मलिनभाव विलोक के।
दुर्गन्धमय मलमूत्रमय नरकादि थल अवलोक के॥
जिनके न उपजे जुगुप्सा समभाव महल-मसान में।
वे श्रेय श्रेयस्कर शिरी (श्री) श्रेयांस विचरें ध्यान में॥

१२. श्री वासुपूज्य वन्दना

निज आतमा के भान बिन सुख मानकर रति-राग में।
सारा जगत निज जल रहा है वासना की आग में॥
तुम वेद-विरहत वेदविद् जिन वासना से दूर हो।
वसुपूज्यसुत वस आप ही सानन्द से भरपूर हो॥

१३. श्री विमलनाथ वन्दना

बस आतमा ही बस रहा जिनके विमल श्रद्धान में।
निज आतमा बस एक ही नित रहे जिनके ध्यान में॥
सब द्रव्य-गुण-पर्याय जिनके नित्य झलकें ज्ञान में।
वे वेद विरहित विमल जिन विचरें हमारे ध्यान में॥

१४. श्री अनन्तनाथ वन्दना

तुम हो अनादि अनंत जिन तुम ही अखण्डानन्त हो।
तुम वेद विरहत वेद-विद शिव कामिनी के कन्त हो॥
तुम सन्त हो भगवन्त हो तुम भवजलधि के अन्त हो।
तुम में अनन्तानन्त गुण तुम ही अनन्तानन्त हो॥

१५. श्री धर्मनाथ वन्दना

हे धर्म जिन सद्धर्ममय सत् धर्म के आधार हो।
भवभूमि का परित्याग कर जिन भवजलधि के पार हो॥
आराधना आराधकर आराधना के सार हो।
धरमातमा परमातमा तुम धर्म के अवतार हो॥

१६. श्री शान्तिनाथ वन्दना

मोहक महल मणिमाल मंडित सम्पदा षट्खण्ड की।
हे शान्ति जिन तृण-सम-तजी ली शरण एक अखण्ड की॥
पायो अखण्डानन्द दर्शन ज्ञान बीरज आपने।
संसार पार उतारनी दी देशना प्रभु आपने॥

१७. श्री कुन्थुनाथ वन्दना

मनहर मदन तन वरन सुवरन सुमन सुमन समान ही।
धनधान्य पूरित सम्पदा अगणित कुबेर समान थी॥
थीं उरवसी सी अंगनाएँ संगनी संसार की।
श्री कुन्थु जिन तृण-सम तजी ली राह भवदधि पार की॥

१८. श्री अरनाथ वन्दना

हे चक्रधर जग जीतकर षट्खण्ड को निज वश किया।
पर आतमा निज नित्य एक अखण्ड तुम अपना लिया॥
हे ज्ञानधन अरनाथ जिन धन-धान्य को ठुकरा दिया।
विज्ञानघन आनन्दघन निज आतमा को पा लिया॥

१९. श्री मल्लिनाथ वन्दना

हे दुपद-त्यागी मल्लि जिन मन-मल्ल का मर्दन किया।
एकान्त पीड़ित जगत को अनेकान्त का दर्शन दिया॥
तुमने बताया जगत को क्रमबद्ध है सब परिणमन।
हे सर्वदर्शी सर्वज्ञानी नमन हो शत-शत नमन॥

२०. श्री मुनिसुव्रत वन्दना

मुनिमनहरण श्री मुनीसुव्रत चतुष्पद परित्याग कर।
निजपद विहारी हो गये तुम अपद पद परिहार कर॥
पाया परमपद आपने निज आतमा पहिंचान कर।
निज आतमा को जानकर निज आतमा का ध्यान धर॥

२१. श्री नमिनाथ वन्दना

निजपद विहारी धरमधारी धरममय धरमातमा।
निज आतमा को साध पाया परमपद परमातमा॥
हे यान-त्यागी नमी तेरी शरण में मम आतमा।
तूने बताया जगत को सब आतमा परमातमा॥

२२. श्री नेमिनाथ वन्दना

आसन बिना आसन जमा गिरनार पर घनश्याम तन।
सद्बोध पाया आपने जग को बताया नेमि जिन।।
स्वाधीन है प्रत्येक जन स्वाधीन है प्रत्येक कन।
पर द्रव्य से है पृथक् पर हर द्रव्य अपने में मगन।।

२३. श्री पार्श्वनाथ वन्दना

तुम हो अचेलक पार्श्वप्रभु वस्त्रादि सब परित्याग कर।
तुम वीतरागी हो गये रागादिभाव निवार कर।।
तुमने बताया जगत को प्रत्येक कण स्वाधीन है।
कर्त्ता न धर्त्ता कोई है अणु अणु स्वयं में लीन है।।

२४. श्री वीर वन्दना

हे पाणिपात्री वीर जिन जग को बताया आपने।
जगजाल में अबतक फंसाया पुण्य एवं पाप ने॥
पुण्य एवं पाप से है पार मग सुख-शान्ति का।
यह धरम का है मरम यह विस्फोट आतम क्रान्ति का॥

पुण्य-पाप से पार, निज आतम का धरम है।
महिमा अपरंपार, परम अहिंसा है यही॥

—०—

महावीर वन्दना

जो मोह माया मान मत्सर, मदन मर्दन वीर हैं।
जो विपुल विघ्नों बीच में भी, ध्यान धारण धीर हैं॥
जो तरण-तारण, भव-निवारण, भव जलधि के तीर हैं।
वे वंदनीय जिनेश तीर्थंकर स्वयं महावीर हैं॥

जो राग-द्वेष विकार वर्जित, लीन आतम ध्यान में।
जिनके विराट् विशाल निर्मल, अचल केवलज्ञान में॥
युगपद् विशद् सकलार्थ झलकें, ध्वनित हों व्याख्यान में।
वे वर्द्धमान महान जिन, विचरें हमारे ध्यान में॥

जिनका परम पावन चरित, जलनिधि समान अपार है।
जिनके गुणों के कथन में, गणधर न पावैं पार है॥
बस वीतराग-विज्ञान ही, जिनके कथन का सार है।
उन सर्वदर्शी सन्मती को, वंदना शत बार है॥

जिनके विमल उपदेश में, सबके उदय की बात है।
समभाव समताभाव जिनका, जगत में विख्यात है॥
जिसने बताया जगत को, प्रत्येक कण स्वाधीन है।
कर्ता न धर्ता कोई है, अणु-अणु स्वयं में लीन है॥

आतम बने परमातमा, हो शान्ति सारे देश में।
है देशना सर्वोदयी, महावीर के सन्देश में॥

—०—

बारह भावना

१. अनित्यभावना

भोर की स्वर्णिम छटा सम क्षणिक सब संयोग हैं।
पद्मपत्रों पर पड़े जलबिन्दु सम सब भोग हैं॥
सान्ध्य दिनकर लालिमा सम लालिमा है भाल की।
सब पर पड़ी मनहूस छाया विकट काल कराल की॥

अंजुली-जल सम जवानी क्षीण होती जा रही।
प्रत्येक पल जर्जर जरा नजदीक आती जा रही॥
काल की काली घटा प्रत्येक क्षण मंडरा रही।
किन्तु पल-पल विषय-तृष्णा तरुण होती जा रही॥

दुखमयी पर्याय क्षणभंगुर सदा कैसे रहे?
अमर है ध्रुव आतमा वह मृत्यु को कैसे वरे?
ध्रुवधाम से जो विमुख वह पर्याय ही संसार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

संयोग क्षणभंगुर सभी पर आतमा ध्रुवधाम है।
पर्याय लयधर्मा परन्तु द्रव्य शाश्वत धाम है॥
इस सत्य को पहिचानना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

२. अशरणभावना

छिद्रमय हो नाव डगमग चल रही मझधार में।
दुर्भाग्य से जो पड़ गई दुर्दैव के अधिकार में॥
तब शरण होगा कौन जब नाविक डुबा दे धार में।
संयोग सब अशरण शरण कोई नहीं संसार में॥

जिन्दगी इक पल कभी कोई बढ़ा नहीं पाएगा।
रस रसायन सुत सुभट कोई बचा नहीं पाएगा॥
सत्यार्थ है बस बात यह कुछ भी कहो व्यवहार में।
जीवन-मरण अशरण शरण कोई नहीं संसार में॥

निज आत्मा निश्चय-शरण व्यवहार से परमातमा।
जो खोजता पर की शरण वह आतमा बहिरातमा॥
ध्रुवधाम से जो विमुख वह पर्याय ही संसार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

संयोग हैं अशरण सभी निज आतमा ध्रुवधाम है।
पर्याय व्ययधर्मा परन्तु द्रव्य शाश्वत धाम है॥
इस सत्य को पहिचानना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

३. संसारभावना

दुखमय निरर्थक मलिन जो सम्पूर्णतः निस्सार है।
जगजालमय गति चार में संसरण ही संसार है॥
भ्रमरोगवश भव-भव भ्रमण संसार का आधार है।
संयोगजा चिद्वृत्तियाँ ही वस्तुतः संसार है॥

संयोग हों अनुकूल फिर भी सुख नहीं संसार में।
संयोग को संसार में सुख कहें बस व्यवहार में॥
दुख-द्वन्द हैं चिद्वृत्तियाँ संयोग ही जगफन्द हैं॥
निज आतमा बस एक ही आनन्द का रसकन्द है॥

मंथन करे दिन-रात जल घृत हाथ में आवे नहीं।
रज-रेत पेले रात-दिन पर तेल ज्यों पावे नहीं॥
सद्भाग्य बिन ज्यों संपदा मिलती नहीं व्यापार में।
निज आतमा के भान बिन त्यों सुख नहीं संसार में॥

संसार है पर्याय में निज आतमा ध्रुवधाम है।
संसार संकटमय परन्तु आतमा सुखधाम है॥
सुखधाम से जो विमुख वह पर्याय ही संसार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना की सार है॥

४. एकत्वभावना

आनन्द का रसकन्द सागर शान्ति का निज आतमा।
सब द्रव्य जड़ पर ज्ञान का घनपिण्ड केवल आतमा॥
जीवन-मरण सुख-दुख सभी भोगे अकेला आतमा।
शिव-स्वर्ग नर्क-निगोद में जावे अकेला आतमा॥

इस सत्य से अनभिज्ञ ही रहते सदा बहिरातमा।
पहिचानते निजतत्त्व जो वे ही विवेकी आतमा॥
निज आतमा को जानकर निज में जमे जो आतमा।
वे भव्यजन बन जायेंगे पर्याय में परमातमा॥

सत्यार्थ है बस बात यह कुछ भी कहो व्यवहार में।
संयोग हैं सर्वत्र पर साथी नहीं संसार में॥
संयोग की आराधना संसार का आधार है।
एकत्व की आराधना आराधना का सार है॥

एकत्व ही शिव सत्य है सौन्दर्य है एकत्व में।
स्वाधीनता सुख शान्ति का आवास है एकत्व में॥
एकत्व को पहिचानना ही भावना का सार है।
एकत्व की आराधना आराधना का सार है॥

५. अन्यत्वभावना

जिस देह में आतम रहे वह देह भी जब भिन्न है।
तब क्या करें उनकी कथा जो क्षेत्र से भी अन्य हैं॥
हैं भिन्न परिजन भिन्न पुरजन भिन्न ही धन-धाम हैं।
हैं भिन्न भगिनी भिन्न जननी भिन्न ही प्रिय वाम है॥

अनुज-अग्रज सुत-सुता प्रिय सुहृद जन सब भिन्न हैं।
ये शुभ अशुभ संयोगजा चिद्वृत्तियाँ भी अन्य हैं॥
स्वोन्मुख चिद्वृत्तियाँ भी आतमा से अन्य हैं।
चैतन्यमय ध्रुव आतमा गुणभेद से भी भिन्न है॥

गुणभेद से भी भिन्न है आनन्द का रसकन्द है।
है संग्रहालय शक्तियों का ज्ञान का घनपिण्ड है॥
वह साध्य है आराध्य है आराधना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना का एक ही आधार है॥

जो जानते इस सत्य को वे ही विवेकी धन्य हैं।
ध्रुवधाम के आराधकों की बात ही कुछ अन्य है॥
अन्यत्व को पहिचानना ही भावना का सार है।
एकत्व की आराधना आराधना का सार है॥

६. अशुचिभावना

जिस देह को निज जानकर नित रम रहा जिस देह में।
जिस देह को निज मानकर रच-पच रहा जिस देह में॥
जिस देह में अनुराग है एकत्व है जिस देह में।
क्षण एक भी सोचा कभी क्या-क्या भरा उस देह में॥

क्या-क्या भरा उस देह में अनुराग है जिस देह में।
उस देह का क्या रूप है आतम रहे जिस देह में॥
मलिन मल पल रुधिर कीकस वसा का आवास है।
जड़रूप है तन किन्तु इसमें चेतना का वास है॥

चेतना का वास है दुर्गन्धमय इस देह में।
शुद्धातमा का वास है इस मलिन कारागेह में॥
इस देह के संयोग में जो वस्तु पलभर आयगी।
वह भी मलिन मल-मूत्रमय दुर्गन्धमय हो जायगी॥

किन्तु रह इस देह में निर्मल रहा जो आतमा।
वह ज्ञेय है श्रद्धेय है बस ध्येय भी वह आतमा॥
उस आतमा की साधना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

७. आस्त्रवभावना

संयोगजा चिद्वृत्तियाँ भ्रमकूप आस्त्रवरूप हैं।
दुखरूप हैं दुखकरण हैं अशरण मलिन जड़रूप हैं॥
संयोग विरहित आतमा पावन शरण चिद्रूप है।
भ्रमरोगहर संतोषकर सुखकरण है सुखरूप है॥

इस भेद से अनभिज्ञता मद मोह मदिरा पान है।
इस भेद को पहिचानना ही आत्मा का भान है॥
इस भेद की अनभिज्ञता संसार का आधार है।
इस भेद की नित भावना ही भवजलधि का पार है॥

इस भेद से अनभिज्ञ ही रहते सदा बहिरातमा।
जो जानते इस भेद को वे ही विवेकी आतमा॥
यह जानकर पहिचानकर निज में जमे जो आतमा।
वे भव्यजन बन जायेंगे पर्याय में परमातमा॥

हैं हेय आस्त्रवभाव सब श्रद्धेय निज शुद्धातमा।
प्रिय ध्येय निश्चय ज्ञेय केवल श्रेय निज शुद्धातमा॥
इस सत्य को पहिचानना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

८. संवरभावना

देहदेवल में रहे पर देह से जो भिन्न है।
है राग जिसमें किन्तु जो उस राग से भी अन्य है।।
गुणभेद से भी भिन्न है पर्याय से भी पार है।
जो साधकों की साधना का एक ही आधार है॥

मैं हूँ वही शुद्धातमा चैतन्य का मार्तण्ड हूँ।
आनन्द का रसकन्द हूँ मैं ज्ञान का घनपिण्ड हूँ॥
मैं ध्येय हूँ श्रद्धेय हूँ मैं ज्ञेय हूँ मैं ज्ञान हूँ।
बस एक ज्ञायकभाव हूँ मैं मैं स्वयं भगवान हूँ॥

यह जानना पहिचानना ही ज्ञान है श्रद्धान है।
केवल स्वयं की साधना आराधना ही ध्यान है॥
यह ज्ञान यह श्रद्धान बस यह साधना आराधना।
बस यही संवरतत्त्व है बस यही संवरभावना॥

इस सत्य को पहिचानते वे ही विवेकी धन्य हैं।
ध्रुवधाम के आराधकों की बात ही कुछ अन्य है॥
शुद्धातमा को जानना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

९. निर्जराभावना

शुद्धातमा की रुची संवर साधना है निर्जरा।
ध्रुवधाम निज भगवान की आराधना है निर्जरा॥
निर्मम दशा है निर्जरा निर्मल दशा है निर्जरा।
निज आतमा की ओर बढ़ती भावना है निर्जरा॥

वैराग्यजननी राग की विध्वंसनी है निर्जरा।
है साधकों की संगिनी आनन्दजननी निर्जरा॥
तप-त्याग की सुख-शान्ति की विस्तारनी है निर्जरा।
संसार पारावार पार उतारनी है निर्जरा॥

निज आतमा के भान बिन है निर्जरा किस काम की।
निज आतमा के ध्यान बिन है निर्जरा बस नाम की॥
है बंध की विध्वंसनी आराधना ध्रुवधाम की।
यह निर्जरा बस एक ही आराधकों के काम की॥

इस सत्य को पहिचानते वे ही विवेकी धन्य हैं।
ध्रुवधाम के आराधकों की बात ही कुछ अन्य है॥
शुद्धातमा की साधना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

१०. लोकभावना

निज आतमा के भान बिन षट्द्रव्यमय इस लोक में।
भ्रमरोगवश भव-भव भ्रमण करता रहा त्रैलोक्य में॥
करता रहा नित संसरण जगजालमय गति चार में।
समभाव बिन सुख रञ्च भी पाया नहीं संसार में॥

नर नर्क स्वर्ग निगोद में परिभ्रमण ही संसार है।
षट्द्रव्यमय इस लोक में बस आतमा ही सार है॥
निज आतमा ही सार है स्वाधीन है सम्पूर्ण है।
आराध्य है सत्यार्थ है परमार्थ है परिपूर्ण है॥

निष्काम है निष्क्रोध है निर्मान है निर्मोह है।
निर्द्वन्द्व है निर्दण्ड है निर्ग्रन्थ है निर्दोष है॥
निर्मूढ है नीराग है आलोक है चिल्लोक है।
जिसमें झलकते लोक सब वह आतमा ही लोक है॥

निज आतमा ही लोक है निज आतमा ही सार है।
आनन्दजननी भावना का एक ही आधार है॥
यह जानना पहिचानना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

११. बोधिदुर्लभभावना

इन्द्रियों के भोग एवं भोगने की भावना।
हैं सुलभ सब दुर्लभ नहीं है इन सभी का पावना॥
है महादुर्लभ आत्मा को जानना पहिचानना।
है महादुर्लभ आत्मा की साधना आराधना॥

नर देह उत्तम देश पूरण आयु शुभ आजीविका।
दुर्वासना की मंदता परिवार की अनुकूलता॥
सत् सज्जनों की संगति सद्धर्म की आराधना।
है उत्तरोत्तर महादुर्लभ आतमा की साधना॥

जब मैं स्वयं ही ज्ञेय हूँ जब मैं स्वयं ही ज्ञान हूँ।
जब मैं स्वयं ही ध्येय हूँ जब मैं स्वयं ही ध्यान हूँ॥
जब मैं स्वयं आराध्य हूँ जब मैं स्वयं आराधना।
जब मैं स्वयं ही साध्य हूँ जब मैं स्वयं ही साधना॥

जब जानना पहिचानना निज साधना आराधना।
ही बोधि है तो सुलभ ही है बोधि की आराधना॥
निज तत्त्व को पहिचानना ही भावना का सार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

१२. धर्मभावना

निज आतमा को जानना पहिचानना ही धर्म है।
निज आतमा की साधना आराधना ही धर्म है॥
शुद्धातमा की साधना आराधना का मर्म है।
निज आतमा की ओर बढ़ती भावना ही धर्म है॥

कामधेनु कल्पतरु संकटहरण बस नाम के।
रतन चिन्तामणी भी हैं चाह बिन किस काम के॥
भोगसामग्री मिले अनिवार्य है पर याचना।
है व्यर्थ ही इन कल्पतरु चिन्तामणी की चाहना॥

धर्म ही वह कल्पतरु है नहीं जिसमें याचना।
धर्म ही चिन्तामणी है नहीं जिसमें चाहना॥
धर्मतरु से याचना बिन पूर्ण होती कामना।
धर्म चिन्तामणी है शुद्धातमा की साधना॥

शुद्धातमा की साधना अध्यात्म का आधार है।
शुद्धातमा की भावना ही भावना का सार है॥
वैराग्यजननी भावना का एक ही आधार है।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है॥

डॉ. भारिल्ल की कृतियों में समागत

विचार-बिन्दु

धर्म का आरम्भ भी आत्मानुभूति से ही होता है और पूर्णता भी इसी की पूर्णता में। इससे परे धर्म की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आत्मानुभूति ही आत्मधर्म है। साधक के लिए एकमात्र यही इष्ट है। इसे प्राप्त करना ही साधक का मूल प्रयोजन है।

– **मैं कौन हूँ**, पृ. १०

× × × × ×

यह भव, भव का अभाव करने के लिए है, किसी पक्ष या सम्प्रदाय के पोषण के लिए नहीं।

– **आप कुछ भी कहो**, पृ. ३९

यह आत्मा दूसरों को सुधारने के निरर्थक प्रयत्न में जितनी शक्ति और समय नष्ट करता है, यदि उसका शतांश भी अपने को सुधारने में लगाए तो पूर्ण सुखी हुए बिना न रहे।

– **सत्य की खोज**, पृ. १७

× × × × ×

आत्महित करना है तो इन प्रतिकूल संयोगों में ही करना होगा। इन संयोगों को हटाना अपने हाथ की बात तो है नहीं। हाँ, हम चाहें तो इन संयोगों पर से अपना लक्ष्य हटा सकते हैं, दृष्टि हटा सकते हैं। यही एक उपाय है आत्महित करने का। अन्य कोई उपाय नहीं।

– **सत्य की खोज**, पृ. २१५

देखो नहीं, देखना सहज होने दो; जानो नहीं, जानना सहज होने दो; रमो भी नहीं, जमो भी नहीं, रमना-जमना भी सहज होने दो। सब कुछ सहज, जानना सहज, देखना सहज, जमना सहज, रमना सहज। कर्तृत्व के अहंकार से ही नहीं, विकल्प से भी रहित सहज ज्ञाता-द्रष्टा बन जाओ। - **सत्य की खोज**, पृ. २०३

× × × × ×

कुछ करो नहीं, बस होने दो; जो हो रहा है, बस उसे होने दो। फेरफार का विकल्प तोड़ो, सहज ज्ञाता-द्रष्टा बन जाओ। बन क्या जाओ, तुम तो सहज ज्ञाता-द्रष्टा ही हो। यह तनाव, यह आकुलता यह व्याकुलता तुम हो ही नहीं।

- **सत्य की खोज**, पृ. २०३

विश्वविख्यात समस्त दर्शनों में जैनदर्शन ही एक ऐसा दर्शन है, जो निज भगवान आत्मा की आराधना को धर्म कहता है; स्वयं के दर्शन को सम्यग्दर्शन, स्वयं के ज्ञान को सम्यग्ज्ञान और स्वयं के ध्यान को सम्यक् चारित्र कहकर इन सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र को ही वास्तविक धर्म घोषित करता है।

ईश्वर की गुलामी से भी मुक्त करनेवाला अनन्त स्वतंत्रता का उद्घोषक यह दर्शन प्रत्येक आत्मा को सर्वप्रभुतासम्पन्न परमात्मा घोषित करता है और उस परमात्मा को प्राप्त करने का उपाय भी स्वावलम्बन को ही बताता है।

- बारहभावना : एक अनुशीलन, पृ. १७३

मृत्यु एक अनिवार्य तथ्य है, उसे किसी भी प्रकार टाला नहीं जा सकता। उसे सहज भाव में स्वीकार कर लेने में ही शान्ति है, आनन्द है। सत्य को स्वीकार करना ही सन्मार्ग है।

- **बारहभावना : एक अनुशीलन**, पृ. २५

× × × × ×

मृत्यु एक शाश्वत सत्य है, जबकि अमरता एक काल्पनिक उड़ान के अतिरिक्त कुछ नहीं है, क्योंकि भूतकाल में हुए अगणित वीरों में से आज कोई भी तो दिखाई नहीं देता। यदि किसी को सशरीर अमरता प्राप्त हुई होती तो वे आज हमारे बीच अवश्य होते। - **बारहभावना : एक अनुशीलन**, पृ. २८-२९

विनय के बिना तो विद्या प्राप्त होती ही नहीं है, पर विवेक और प्रतिभा भी अनिवार्य है, इनके बिना भी विद्यार्जन असंभव है।

– **आप कुछ भी कहो**, पृ. २५

× × × × ×

क्षेत्र और काल के प्रभाव से समागत विकृतियों का निराकरण करना जागृत विवेक का ही काम है, पर इसमें सर्वांग सावधानी अनिवार्य है। – **आप कुछ भी कहो**, पृ. २५

× × × × ×

शरीर का घाव तो समय पाकर भर जाता है, पर मन के घाव का भरना सहज नहीं होता। – **आप कुछ भी कहो**, पृ. ५३

सफलता विवेक के धनी कर्मठ बुद्धिमानों के चरण चूमती है।

- आप कुछ भी कहो, पृ. २३

× × × × ×

शब्दों की भाषा से मौन की भाषा किसी भी रूप में कमजोर नहीं होती, बस उसे समझने वाले चाहिए।

- आप कुछ भी कहो, पृ. १७

× × × × ×

चेहरे की भाषा पढ़ना हर कोई थोड़े ही जानता है, उसके लिए तीक्ष्ण प्रज्ञा अपेक्षित है।

- आप कुछ भी कहो, पृ. ३८

कपोल-कल्पित चमत्कारों की बढ़ा-चढ़ाकर चर्चा करना भगवान का बहुमान नहीं, भक्ति नहीं, स्तुति नहीं, वरन् उनमें विद्यमान वीतरागता, सर्वज्ञता, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य आदि गुणों का चिन्तवन, महिमा, बहुमान ही वास्तविक भक्ति है।

- सत्य की खोज, पृ. २९

× × × × ×

सत्साहित्य का निर्माण परमसत्य के उद्घाटन के लिए किया जानेवाला महान कार्य है, अतः इसका पठन-पाठन भी परमसत्य की उपलब्धि के लिए गम्भीरता से किया जाना चाहिए।

- आप कुछ भी कहो, पृ. २

मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ

- डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण, पर की मुझ में कुछ गन्ध नहीं।
मैं अरस अरूपी अस्पर्शी, पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥
मैं रंग-राग से भिन्न, भेद से भी मैं भिन्न निराला हूँ।
मैं हूँ अखण्ड चैतन्यपिण्ड, निज रस में रमने वाला हूँ॥
मैं ही मेरा कर्त्ता-धर्त्ता, मुझ में पर का कुछ काम नहीं।
मैं मुझ में रहने वाला हूँ, पर में मेरा विश्राम नहीं।
मैं शुद्ध, बुद्ध, अविरुद्ध, एक, पर-परणति से अप्रभावी हूँ।
आत्मानुभूति से प्राप्त तत्त्व, मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ॥